ओ३म्

**आर्यसमाज के दो अग्रणीय प्रकाशक ‘विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली’ और ‘श्री घूड़मल प्रह्लाद कुमार आर्य धर्मार्थ न्यास, हिंडौन सिटी’**

-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।

 आर्यसमाज वेदों के पुनरुद्धार और विश्वव्यापी प्रचार का एक मात्र आन्दोलन है जिसका शुभारम्भ महर्षि दयानन्द सरस्वती (1825-1883) द्वारा मथुरा के अपने विद्यागुरु प्रज्ञाचक्षु स्वामी विरजानन्द सरस्वती से वेदों के व्याकरण अष्टाध्यायी-महाभाष्य पद्धति से अध्ययन कर सन् 1863 में आरम्भ किया गया था। यह कार्य इतना महान एवं विशाल है कि जिसकी तुलना में अन्य कोई कार्य नहीं हो सकता। एक प्रकार से वेद प्रचार आन्दोलन मनुष्य को मनुष्य ही नहीं अपितु मनुष्य को ईश्वरभक्त, वेदभक्त, देवता, ऋषि, मुनि, विद्वान, सदाचारी, गुणवान, सेवाभावी, परोपकारी आदि अनेकानेक गुणों से सुभूषि बनाने का आन्दोलन है जिसमें मनुष्य के सभी दुर्गुर्णों को दूर कर उसके स्थान पर सद्गुणों के आधान का का प्रयोजन है। ऐसा महान उद्देश्य अन्य किसी सामाजिक व राजनीतिक संगठन का न कभी रहा है और न भविष्य में होने की ही आशा है। महर्षि दयानन्द की सन् 1883 में विरोधियों के विषपान से मृत्यु के कारण इस आन्दोलन को धक्का लगा। उनके अनुयायियों ने आन्दोलन की बागडोर सम्भाली और आन्दोलन को तेजी से आगे बढ़ा। आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने ही देश में सबसे पहले ‘‘स्वराज्य” व ‘‘सुराज्य” की बात की थी। अपने विश्व के श्रेष्ठतम ग्रन्थ ‘‘सत्यार्थप्रकाश” में उन्होंने लिखा है कि ‘जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है।‘ वह यह भी कहते हैं कि ‘मत-मतान्तर के आग्रह से रहित, अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजा पर पिता-माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं (हो सकता) है।’ इन पंक्तियों को पढ़कर हमें लगता है कि महर्षि दयानन्द ने अपने सभी अनुयायियों व देशवासियों को स्वदेशी राज्य स्थापित करने हेतु सबसे पहले आन्दोलन करने की प्रेरणा की थी। उनके दो प्रमुख शिष्य पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा तथा महादेव गोविन्द रानाडे, पुणे को उनके इन स्वप्नों को साकार करने का सर्वप्रथम प्रयत्न करने का श्रेय है और आगे चलकर देश में जो क्रान्तिकारी और अहिंसात्मक आन्दोलन चले उनके आद्य नेता भी यह दो महापुरुष ही थे।

 महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन में उपदेश व प्रवचनों के द्वारा प्रचार किया था। उन्होंने अनेक मतों के अनेक विद्वानों से शास्त्रार्थ व शास्त्र चर्चायें भी कीं, जो कि वेदों के प्रचार में सहायक थीं। ऋषि दयानन्द के विचारों से प्रभावित होकर स्वामी श्रद्धानन्द, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, पं. लेखराम, महात्मा हंसराज, लाला लाजपतराय आदि उनके शिष्य बने जिन्होंने वैदिक धर्म के प्रचार को आगे बढ़ाया। मौखिक उपदेश, प्रवचन व शास्त्रार्थ के अतिरिक्त ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय एवं ऋग्वेद-यजुर्वेद भाष्य आदि अनेक ग्रन्थों की रचना कर उनको प्रकाशित कराया जो प्रचार में प्रभावशाली स्थाई साधन सिद्ध हुए। आज उनकी अनुपस्थिति में उनके ग्रन्थों द्वारा ऋषि दयानन्द ही वेदों का प्रचार करते हुए दिखाई देते हैं। ऋषि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश का पहला संस्करण मुरादाबाद के राजा जयकृष्णदास जी ने प्रकाशित कराया था। उसका संशोधित संस्करण ऋषि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित वैदिक यन्त्रालय से मुद्रित होकर उनकी मृत्यु के कुछ काल बाद प्रकाशित हुआ। ऋषि दयानन्द के अन्य सभी ग्रन्थ भी समय-समय पर इसी यन्त्रालय से प्रकाशित होते आ रहे हैं। ऋषि दयानन्द की मृत्यु के पश्चात लाहौर के उनके अनुयायी महाशय राजपाल ने ‘‘राजपाल एण्ड संस” नाम से प्रकाशन संस्थान स्थापित किया जहां से महर्षि दयानंद व आर्य विद्वानों के ग्रन्थों के हिन्दी व उर्दू ग्रन्थों के अनेक संस्करण प्रकाशित हुए। सन् 1923 में मिर्जाईयों ने एक कुख्यात पुस्तक ‘उन्नीसवीं सदी का महर्षि’ का प्रकाशन किया जिसमें महर्षि दयानन्द के जीवन व चरित्र पर मिथ्या दोषारोपण किया गया था। आर्यसमाज के विद्वान पं. चमूपति जी ने इन आक्षेपों के प्रतिवाद में एक पुस्तक लिखी जिसका प्रकाशन महाशय राजपाल जी ने किया। इस पुस्तक के विरोध में राजपाल जी पर मुकदमें चले जिसमें वह विजयी हुए। इसके बाद एक नेता ने भड़काऊ बयान दिया जिससे मिर्जाई भड़क गये। उन्होंने पुस्तक के विरोध में महाशय राजपाल जी की हत्या करा दी। बाद में इस संस्थान का आर्य साहित्य के प्रकाशन कार्य मन्द पड़ गया।

 सन् 1925 में ऋषि दयानन्द के कोलकत्ता निवासी अनुयायी श्री गोविन्दराम जी ने आर्यसमाज के साहित्य के प्रकाशन का कार्य आरम्भ किया। श्री गोविन्द राम जी महान गोभक्त श्री हासानन्द जी के सुपुत्र थे। हासानन्द जी ने गोरक्षा हेतु मथुरा-वृन्दावन मार्ग पर एक विशाल गोचर भूमि न्यास की स्थापना कर महान कार्य किया जहां बूढे गोवंश को रखकर उनकी रक्षा व पालन किया जाता है। आज भी यह संस्था गोरक्षा के क्षेत्र में योगदान कर रही है। गोविन्दराम जी ने आर्यसमाज का प्रचुर साहित्य प्रकाशित कर अपने समय में एक रिकार्ड कायम किया। उनके दिवंगत होने के बाद प्रकाशन का कार्य उनके सुपुत्र कीर्तिशेष श्री विजय कुमार जी (1932-1991) ने सम्भाला और प्रकाशन को बुलन्दियों पर ले गये। दिनांक 30-12-1991 को विजयी जी की मृत्यु होने पर उनके सुपुत्र श्री अजय आर्य जी ने प्रकाशन का कार्य सम्भाला और एक के बाद एक भव्य प्रकाशन कर आर्यसमाज के प्रकाशन जगत में एक नया इतिहास रच डाला। आपने ऋषि दयानन्द सहित प्रमुख आर्य विद्वानों के ग्रन्थों व ग्रन्थावलियों का प्रकाशन किया। आज भी यह संस्थान नियमित रूप से अनेक नये व पुराने महत्वपूर्ण ग्रन्थों का प्रकाशन कर रहा है। आर्यसमाज ने विगत 91 वर्षों में वेद प्रचार के क्षेत्र में जो प्रगति की है उसका श्रेय सन् 1925 में स्थापित ‘गोविन्दराम हासानन्द प्रकाशन’ द्वारा प्रकाशित आर्य साहित्य को भी जाता है। आर्य जगत सदैव इस प्रकाशन संस्था के संचालकों का आभारी रहेगा।

 वर्तमान में आर्यसमाज के साहित्य के एक अन्य प्रमुख प्रकाशक श्री प्रभाकर देव आर्य, हिण्डोन सिटी हैं जो अपने पिता श्री घूड़मल प्रह्लाद कुमार आर्य के नाम से न्यास स्थापित कर प्रकाशन करते हैं। आपने भी प्रकाशन के क्षेत्र में विगत 20-25 वर्षों में क्रान्ति की है। आपने ऋषि दयानन्द और आर्य विद्वानों के अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थों के अनेक संस्करण प्रकाशित कर वेद प्रचार ककार्य में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। जिस कारण आप आर्यसमाज के इतिहास में अपना मुख्य स्थान बना लिया है। आपने एक महत्वपूर्ण कार्य यह भी किया है कि आर्यसमाज के वेदभाष्यकार पं. हरिशरण सिद्धान्तालंकार जी का चारों वेदों का हिन्दी भाष्य अनेक खण्डों में प्रकाशित किया है। पुराने व नये विद्वानों के अनेक ग्रन्थ व ग्रन्थावलियां, जो अप्राप्य थे, उनका भी आपने प्रकाशन किया है जिससे पाठकों को इन दुर्लभ ग्रन्थों के दर्शन करने का सौभाग्य मिला है। आर्यसमाज के अन्य प्रकाशकों में आर्य प्रकाशन, दिल्ली का भी महत्वपूर्ण योगदान है। आपने भी प्रभूत साहित्य का प्रकाशन किया है। इस प्रकाशन संस्था की स्थापना श्री तिलक राज जी ने की थी जिसका निर्वाह वर्तमान में उनके सुपुत्र योग्यतापूर्वक कर रहे हैं। आर्यजगत के अन्य मुख्य प्रकाशकों में रामलाल कपूर ट्रस्ट (रेवली-सोनीपत), आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट दिल्ली, गुरुकुल झज्जर, दयानन्द संस्थान दिल्ली, स्वामी सत्यानन्द नैष्ठिक झज्जर, अमरस्वामी प्रकाशन विभाग गाजियाबाद आदि का नाम उल्लेखनीय है। सभी प्रकाशक आर्य समाज के अनुयायियों द्वारा प्रशंसा के पात्र हैं।

 हमें इस वर्ष 4-6 नवम्बर, 2016 को ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा द्वारा अजमेर में आयोजित ऋषि मेले में जाने का अवसर मिला। यहां आर्यजगत के सभी प्रमुख प्रकाशकों ने अपने अपने प्रकाशनों की बिक्री हेतु स्टाल लगाये हुए थे। हम 5 नवम्बर, 2016 को विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली के स्टाल पर बैठे थे। हमारी दृष्टि सामने से आते हुए श्री प्रभाकरणदेव आर्य, हिण्डोन सिटी पर पड़ी। हम उन से मिले और स्टाल पर बैठ कर श्री अजय आर्य साहित परस्पर वार्तालाप किया। श्री प्रभाकरदेव आर्य जी ने एक ग्रन्थ दृष्टान्त सागर भी वहां से क्रय किया। हमने वार्तालाप के मध्य आर्यजगत के दो प्रमुख प्रकाशकों एवं इतिहास पुरुष श्री अजय आर्य जी और श्री प्रभाकरदेव आर्य जी के चित्र भी लिये। इन चित्रों सहित अन्य कुछ चित्रों को आज हम इस लेख द्वारा साझा कर रहे हैं। श्री अजय आर्य और श्री प्रभाकरदेव आर्य जी के चित्रों का विशेष महत्व है और कालान्तर में भी होगा। हम आशा करते हैं कि हमारे यह दोनों प्रकाशक परस्पर मित्रता एवं सहयोग करते हुए दीर्घकाल तक प्रकाशन के क्षेत्र में डटे रहेंगे, जिससे आर्यसमाज के प्रचार व प्रसार में विशेष बल मिलेगा। इन्हीं पंक्तियों के साथ हम इस लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**

**ओ३म्**

**‘मनुष्योन्नति के लिए असत्य एवं पाखण्ड का खण्डन आवश्यक है’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

मनुष्योन्नति का मूल मन्त्र क्या है? यह **‘सत्यं वद धर्मं चर’** ही सिद्ध होता है। यदि मनुष्य सत्य का आचरण न कर असत्य का आचरण करता है तो क्या उसकी उन्नति हो सकती है? इसका उत्तर है कि ऐसे मनुष्य की उन्नति नहीं अपितु पतन ही होगा। मनुष्य अपने अज्ञान, पूर्वाग्रहों व स्वार्थ आदि के कारण असत्य का प्रयोग करते हैं जिनका तात्कालिक प्रभाव अनुकूल व प्रतिकूल हो सकता है परन्तु उसके दूरगामी परिणाम बुरे ही होते हैं। इसके विपरीत यदि मनुष्य सत्य का आचरण कर असफल भी हो जाता है तो इसके दूरगामी परिणाम अच्छे व भले ही होते हैं। सत्य का आचरण व्यक्तिगत अथवा सामाजिक स्तर पर किया जाये तो इससे लाभ ही लाभ होता है। धर्म का अर्थ भी सत्य का आचरण व सत्य बोलना ही होता है। मन, वचन व कर्म से सत्य का आचरण मनुष्य को ईश्वर व देव पुरुषों की निकट पहुंचाता है। इसका कारण है कि ईश्वर व विद्वान जिन्हें देव कहा जाता है, सत्य का व्यवहार व आचरण ही पसन्द करते हैं, असत्य का नहीं। उन्नति का एक उपाय व साधन भी विद्वानों की संगति ही होता है। यदि हम विद्वान आचार्यों व विद्वान मनुष्यों की संगति में रहेंगे तो हमारा निश्चय ही कल्याण होगा।

 खण्डन क्या होता है? खण्डन असत्य व अज्ञान का ही किया जाता है। यदि कोई व्यक्ति रात्रि को दिन और दिन को रात्रि जानता व मानता हो तो उस अज्ञानी को यह बताना और मनवाना कि सूर्यादय से दिन का आरम्भ होता है तथा यह सूर्यास्त तक रहता है। सूर्यास्त से पुनः सूर्योदय तक के अलग अलग काल सायं, रात्रि व उषाकाल कहे जाते हंै। ऐसा ही यदि कोई व्यक्ति ईश्वर के स्थान पर जड़ पूजा के रूप में मूर्ति, कब्र, नदी, वृक्ष आदि की पूजा को ही अपना इष्ट बना लेता है तो उसको इसके मिथ्यात्व को समझाना खण्डन और जड़ पूजा की त्रुटि व खामियों का ज्ञान कराकर इनसे संबंधित सत्य मान्यताओं का प्रकाश करना मण्डन कहलाता है। उदाहरण के रूप में हम पौराणिक मान्तयाओं वाले परिवार में जन्में जहां मूर्तिपूजा, अवतारवाद, मृतक श्राद्ध, फलित ज्योतिष, नदियों में स्नान का महात्म्य, सामाजिक भेदभाव के व्यवहार को माना जाता था। किशोरावस्था वा युवावस्था तक हमें इनकी बुराईयों का ज्ञान नहीं हुआ। हम एक मित्र के द्वारा आर्यसमाज के सम्पर्क में आये। वहां सत्संगों में जाने का अवसर मिला। आर्यसमाज में विद्वानों के अनेक विषयों पर उपदेश श्रवण किये। इन सभी मान्यताओं के विरोध में तर्क व खण्डन सुनकर आरम्भ में तो हमें बुरा लगता था परन्तु विद्वानों की प्रभावपूर्ण प्रवचन शैली और उनके तर्कों का हमारे पास उत्तर न होने के कारण उन बातों ने हमें सोचने पर विवश किया। हमने उनकी पुस्तकें व मुख्यतः सत्यार्थ प्रकाश को लेकर पढ़ा तो हमारी आंखे खुली। धीरे धीरे हमारा वैचारिक परिवर्तन आरम्भ हुआ और आज हमें ईश्वर की पूजा का यथार्थ महत्व विदित हुआ जिसके अनुसार ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सृष्टिकर्ता, सर्वान्तर्यामी, सबको सन्मार्ग में चलने की प्रेरणा देने वाला, अनादि, अजन्मा, नित्य, अमर, वेद ज्ञान व उनके सत्यार्थों का दाता है। अपने सत्य आचरण से ईश्वर को प्रसन्न करना ही उसकी पूजा है और उसके विपरीत आचरण ही मनुष्य को ईश्वर के दण्ड का भागी बनाता है। ईश्वर की उपासना के लिए ईश्वर की स्तुति किया जाना आवश्यक है। स्तुति में ईश्वर के गुणों, कर्म व स्वभाव का सत्य वर्णन ही किया जाता है। प्रार्थना में ईश्वर से सत्याचरण में शक्ति की प्राप्ति के लिए प्रार्थना सहित अभीष्ट पदार्थों का मांगना हो सकता है। सन्ध्या भली प्रकार हो इसके लिए वेद व वैदिक साहित्य का स्वाध्याय भी आवश्यक है। यदि स्वाध्याय वा वैदिक विद्वानों के उपदेशों का श्रवण नहीं होगा तो इनसे मिलने वाले ज्ञान के अभाव में हम भली प्रकार से ईश्वर का ध्यान नहीं कर सकेंगे। स्वाध्याय व उपदेशों से भले कामों को करने की प्रेरणा मिलती है। इसमें यज्ञ करना, पक्षपात रहित न्याय का आचरण करना, सेवा व परोपकारमय जीवन व्यतीत करना, माता-पिता-आचार्य-विद्वानों की संगति व सेवा सहित प्राणी मात्र के प्रति हित की भावना रखना होता है। यह सब वेदों के अध्ययन से व विद्वानों के उपदेशों से ज्ञात होता है। मांसाहार मनुष्यों के लिए उचित नहीं है। मांसाहार के लिए स्वयं व दूसरों के द्वारा निर्दोष पशु व पक्षियों की अकारण हिंसा की जाती है जो कि धर्म न होकर अधर्म या पाप कर्म होता है और ईश्वरीय विधान में दण्डनीय होता है। जो लोग इस ज्ञान व विज्ञान से परिचित नहीं हैं व इसके विपरीत आचरण करते हैं, उन्हें यह ज्ञान देने के साथ उनमें यदि इसके विपरीत कोई विचार, मान्यता व आचरण हो, तो उसका खण्डन किया जाना आवश्यक है जिससे परिणाम में उनको दुःख प्राप्त न हो।

 खण्डन एक प्रकार से शौच कर्म होता है। बिना स्वच्छता सम्पादित किये हम उन्नति नहीं कर सकते। घर में झाडू लगाना, बर्तन को स्चच्छ रखना, कपड़े धोकर स्वच्छ करना आदि इसी में आते हैं। यह दुरितो का खण्डन और भद्र का मण्डन है। जिस प्रकार मन के मैल व अज्ञान को दूर करने के लिए ज्ञान की पुस्तकें व आचार्यों के सदोपदेश, प्राणायाम व स्वाध्याय आदि आवश्यक होते हैं उसी प्रकार से मिथ्या मान्यताओं को हटाने व दूर करने के लिए खण्डन सहित मण्डन आवश्यक होता है। खण्डन व मण्डन दोनों साथ साथ किया जाना आवश्यक है। केवल खण्डन हो मण्डन न हो, तो यह उचित नहीं है। असत्य का खण्डन करने के साथ उसका सत्य विकल्प भी विद्वानों को प्रस्तुत करना चाहिये। महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन काल में मण्डन व खण्डन दोनों ही किये। उन्होंने बताया कि वेदानुसार सच्ची ईश्वर पूजा क्या व कैसे होती है। इसको उन्होंने तर्क व युक्ति पर भी उपयोगी सिद्ध किया। इसके साथ उन्होंने मिथ्या पूजाओं का भी प्रकाश किया और उनका युक्ति व तर्कों से खण्डन किया। पक्षपात रहित मनुष्यों ने उनकी बातों को सुना तो उनकी बातें समझ में आ गई और उन्होंने अपने जीवन से सभी प्रकार के मिथ्याचारों को बन्द कर दिया और वेदमार्ग को अपना लिया। ऐसे लोगों का जीवन अभ्युदय व निःश्रेयस को प्राप्त हुआ है। ऐसे लोगों में हमारे सामने स्वामी श्रद्धानन्द जी, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, पं. लेखराम, महात्मा हंसराज, स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती, स्वामी सर्वदानन्द सरस्वती, पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु, स्वामी सर्वानन्द जी, पं. युधिष्ठिर मीमांसक, स्वामी वेदानन्द जी, लाला लाजपतराय, भाई परमानन्द, पं. रामप्रसाद बिस्मिल, पं. भगवदत्त जी आदि अनेक नाम लिये जा सकते हैं। इन सबका जीवन प्रशंसनीय होने से हमारे व सभी के लिए अनुकरणीय है। महर्षि दयानन्द ने जो सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ लिखा है वह असत्य का खण्डन और सत्य का मण्डन करने के उद्देश्य से ही लिखा था। इसका अध्ययन जीवनोन्नति के लिए महत्वपूर्ण है।

 सत्य के निर्धारण के लिए खण्डन व मण्डन दोनों ही आवश्यक हंै। खण्डन का अर्थ है कि किसी पदार्थ के सत्य व असत्य दोनों पक्षों पर विचार किया जाये और तर्क व युक्तियों से सत्य का मण्डन और असत्य का खण्डन किया जाये। जो व्यक्ति असत्य के खण्डन को पसन्द नहीं करते वह जीवन में सत्य मत को कभी प्राप्त नहीं हो सकते। असत्य का खण्डन एक प्रकार से रोग निवारणार्थ औषधियों का सेवन है और उपचार व औषध सेवन न करना रोग को बढ़ाना व स्वयं को हानि पहुंचाना है। यदि हम किसी व्याधि या रोग से ठीक व स्वस्थ होना चाहते है तो हमें चिकित्सक के पास जाकर रोग के बारे में परीक्षा करानी होगी, उसके कारण व उससे होने वाले दुष्परिणामों को जानना होगा और साथ ही उसकी चिकित्सा करानी होगी। यदि लोग चिकित्सक को रोगों से होने वाली हानियों को सुनकर उसका विरोध करेंगे तो वह कभी स्वस्थ नही हो सकते। यही स्थिति धार्मिक, सामाजिक व अन्य क्षेत्रों में व्याप्त दुरितों को दूर करने के लिए, बुराईयों का प्रकाशन अर्थात् खण्डन किया जाता है। खण्डन से वही व्यक्ति डरते हैं जिनका अपना पक्ष दुर्बल होता है। वह अपने अज्ञान व स्वार्थ के कारण और कई बार केवल स्वार्थ के कारण खण्डन को पसन्द नहीं करते जो कि अनुचित है। अतः खण्डन से घबराना नहीं चाहिये अपितु खण्डन का खण्डन करने के लिए ठोस व सही युक्तियों व तर्क का सहारा लेना चाहिये जिससे सत्य स्थापित हो सके। आजकल देखा जा रहा है कि समाज में असत्य का खण्डन नहीं होता। इस कारण समाज में अनेक धार्मिक व सामाजिक रोग व्याप्त हो रहे हैं। इन्हें दूर नहीं किया जायेगा तो समाज में दुःख व अशान्ति को दूर व शान्ति व सुख को स्थापित नही किया जा सकेगा। शास्त्र कहते हैं कि जहां अपूज्यों की पूजा होती है और पूज्यों का तिरस्कार होता है, उस समाज व स्थान पर दुर्भिक्ष अर्थात् आपदाओं सहित म्त्यु का भय व्याप्त रहता है। इससे बचने का उपाय है कि अपूज्यों का सम्मान न किया जाये और पूज्यों का अपमान न किया जाये। कहीं कोई पात्र सच्चा विद्वान यदि खण्डन करता है तो उसे अमृत के समान समझना चाहिये। यह असत्य का खण्डन और सत्य का मण्डन ही मनुष्य जाति की उन्नति व कल्याण का मुख्य साधन है। इन्हीं पंक्तियों के साथ लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**